स्वामी रामानंद तीर्थ मराठवाडा विश्वविद्यालय,नांदेड

कला संकाय के अंतर्गत पीएच.डी. (हिन्दी) उपाधि

हेतु प्रस्तुत शोध प्रबंध की रूपरेखा

"रणेन्द्र के कथा साहित्य में आदिवासी विमर्श"

शोधकर्ता

यादव आनंद लखन

एम.ए., बी.एड.

शोधनिर्देशक

डॉ.संजय नामदेव गडपायले

एम.ए. (हिंदी), बी.एड., पी-एच्.डी.

सहाय्यक प्राध्यापक, हिंदी विभागाध्यक्ष

माधवराव पाटील महाविद्यालय, पालम

जि.परभणी

अनुसंधान केंद्र

हिंदी भाषा तथा साहित्य

महाराष्ट्र उदयगिरी महाविद्यालय, उदगीर

जून 2017

“रणेंद्र के कथा साहित्य में आदिवासी विमर्श”

पहला अध्याय : आदिवासी विमर्श स्वरूप एवं परिभाषा

1.1 आदिवासी शब्द की व्युत्पत्ति

1.2 आदिवासी शब्द का अर्थ

1.3 आदिवासी विमर्श की परिभाषा

1.4 आदिवासी विमर्श का स्वरूप

निष्कर्ष

दूसरा अध्याय : कथाकार रणेंद्र : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

2.1 कथाकार रणेंद्र का व्यक्तित्व

2.2 कथाकार रणेंद्र का कृतित्व

तीसरा अध्याय : रणेन्द्र के कथा साहित्य का तात्त्वीक विवेचन

3.1 कहानी

3.1.1 कथावस्तु

3.1.2 चरित्र चित्रण

3.1.3 संवाद

3.1.4 देशकाल तथा वातावरण

3.1.5 भाषा शिल्प

निष्कर्ष

3.2 उपन्यास

3.2.1 कथावस्तु

3.2.2 चरित्र चित्रण

3.2.3 संवाद

3.2.4 देशकाल तथा वातावरण

3.2.5 भाषा शैली

निष्कर्ष

चौथा अध्याय : रणेंद्र के कथा साहित्य में आदिवासी विमर्श

4.1 विकास के नाम पर आदिवासियों का शोषण

4.1.1 आर्थिक शोषण

4.1.2 सामाजिक शोषण

4.1.3 राजनीतिक शोषण

4.1.4 शैक्षिक शोषण

4.2 आदिवासी नारी शोषण

4.3 आदिवासी समाज का विद्रोह

4.4 भूमंडलिकरण

4.5 आदिवासी संस्कृति का पतन

निष्कर्ष

पाँचवा अध्याय : रणेन्द्र के कथा साहित्य का शिल्प

5.1 शिल्प विधान का अर्थ

5.2 शिल्प शब्द का स्वरुप

5.3 शिल्प की परिभाषा

5.4 रणेन्द्र के कहानी साहित्य में शिल्प

5.5 रणेंद्र के उपन्यासों का शिल्प

5.5.1 शब्द प्रयोग

5.5.2 गालियाँ

5.5.3 मुहावरें

5.5.4 लोकोक्ति

5.5.5 लोकगीत

उपसंहार

परिशिष्ट

संदर्भ ग्रंथ सूची

अ) मूल ग्रंथ

आ) आधार ग्रंथ

इ) पत्रिकाएँ

ई) कोश

उ) इंटरनेट विकिपीडियाँ

भूमिका :

भारत में लगभग तीन करोड़ से अधिक आदिवासी है जिनमें से पंचानवे प्रतिशत गाँवों में रहते है और ज्यादा तर खेतीहर मजदूर निम्न जातिदार किसान है। भारत के सबसे ज्यादा शोषित वर्ग के तौर पर खेतिहर मजदूरों की गिनती होती है पर आदिवासी मजदूरों के हालात सबसे गए गुजरे है। उसका शोषण कागज पर लिखकर और कई बार बिना लिखे किया जा रहा है ऐसे में इस समुदाय का अलगाव, उसका पिछड़ापन बढ़ेगा ही। इन बुनियादी सवालों को देखे, सुने सुलझाए बिना कोई विकास बेमानी है।

आदिवासी विमर्श सदियों से शोषित पीड़ित उस जनजाति का साहित्यिक विद्रोह है जो लेखनी के माध्यम से अपना हक पाने की कोशिश करता है। और इसके लिए संघर्ष भी करता है। हजारों सालों के बीत जाने के बावजूद आज भी आदिवासी जंगलों, कंदराओं में रहकर अपना जीवन यापन कर रहे है। इनकी दुख दुर्दशा के प्रति किसी का ध्यान नहीं गया है। ठीक उल्टे इन्हें तिरस्कार और हास्यास्पद नजरों से देखा गया है। आधुनिक भारत के निर्माण में और अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए इनका कम योगदान नहीं रहा है। बिरसा मुंडा, उमेद बसवा, सिद्दा कानू आदि ऐसे बहुतसे वीर आदिवासी थे जिन्होंने अपनी मातृभूमि के लिए अपना बलिदान दिया है। परंतु आज आदिवासी शब्द के उच्चारण से ही हमारे सम्मुख खड़ा हो जाता है प्रत्येक सदी से छला सताया, नंगा किया और सोची समझी साजिश के तहत वन जंगलों में जबरन भगाया जाता रहा एक असंगठित मनुष्य। वह मनुष्य जो अपनी स्वतंत्र परंपरा सहित सहस्त्र सालों से गाँव देहातों से दूर घने जंगलों में रहनेवाला है।

आदिवासी साहित्य और आदिवासी समाज आज की दुनिया से कोसो मिल दूरी पर खड़ा है। आदिवासी समाज पूरी तरह से अपनी संस्कृति और संस्कारों में लिप्त है। ग्लैमर और चकाचौंध दुनिया की रोशनी की नाम नहीं जानता। वह बस इतना ही जानता है कि अपने जंगल महल को बचने के लिए कौन सा दीपक जलाए कि पूरा जंगल महल सदैव के लिए रौशन हो जाए। आदिवासी समाज आज भी गाँव में ही बसता है, खेती और मजदूरी करता है और अपना जीवन व्यतीत करता है। डॉ. सुखदेव थोरात ने आदिवासी साहित्य की जरूरत को रेखांकित करते हुए इस बात पर जोर दिया है कि आदिवासी साहित्य शेष साहित्य से उसी प्रकार भिन्न है जैसे समाज से स्वयं आदिवासी समाज। इसीलिए इनका सुझाव इसे अपने मानको से न परखे।

आदिवासी सभी प्रांत, सभी विषयों से संपन्न है जैसे पानी, खनिज, वन संपदा, उर्वर भूमि आदि। फिर भी सरकार की गैरबेजिम्मेदारी के कारण आदिवासी गरीबी में जीते है। आदिवासियों को कुचलकर जंगल की संपदा को लूटने की प्रथा गोरों से ही आ रही है। सरकार की ओर से लाई गई नीतियों के कारण आदिवासी लूटमार के शिकार बनते जा रहे है। भूसंचालन, वन्य प्राणी संरक्षण, एक्साइज आदि को छोड़कर बाकी पेशेवरों को अपनाना पड़ा। सन 1991 से आएये हुए आर्थिक सुधार के कारण वर्ल्ड बैंक की ओर दिये गये प्रोजेक्ट्स के कारण जंगली संपदा को लूटना पड़ रहा है।

गरीबी, बेरोजगारी और तरह-तरहके कारणों से 40 प्रतिशत आदिवासी लोग जंगल और पहाड़ो को छोड़कर नगरों की ओर जा रहे हैं वे लोग छोटे-मोटे काम करते हुए जीवन बिताते है। अगर उनको काम नहीं मिलता है तो अनैतिक कार्य भी करने के लिए तैयार हो जाते है। ये लोग अन्यों की बात पर विश्वास नहीं रखते है। इसलिए उनमें थोड़ी सी बदलाव लाना चाहें तो क्रांतिकारी परिवर्तन के लिए प्रयत्न करना पड़ता है। राजनीतिक दल सभी बाहर आकर आदिवासी लोगों की समस्याओं पर आवाज देनी चाहिए। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आंध्र प्रदेश में आदिवासी जनजातियाँ आंध्र प्रदेश राज्य की शोभा बढ़ा रहे है।

लेखक रणेंद्र का उपन्यास ग्लोबन गाँव के देवता में झारखंड के आदिवासियों के जीवन का यथार्थ है बल्कि पूरे भारतीय मूल निवासियों की संघर्षगाथा है। विश्वव्यापी पूंजीवाद के बढ़ते कदम ने समग्र भारत के आदिवासियों की सामाजिक और सांस्कृतिक परंपराओं को नष्ट हुआ है। विकास के नाम पर वनवासी संस्कृति खत्म की जा रही है। राजमार्गों का निर्माण, रेल या औद्योगिकीकरण आवासीय योजना के नाम पर आदिवासियों की जमीन कम दाम पर खरीदकर भूमिहीन किया जा रहा है।

रणेंद्र ने अपने कथासाहित्य के माध्यम से आदिवासियों के समुदाय का आत्मसम्मान अस्तित्व तथा अस्तित्व की रक्षा और निरंतर संघर्ष और जूझते रहने की हृदयद्रावक कहानी को प्रस्तुत किया है। आज हम कहते है की विश्व एक गाँव बन गया है, लेकिन अपनों से हम उतना ही दूर गए है भूमंडलीकरण के नाम पर शोषण का नया तरीका पूँजीवादियों ने ढूँढ निकाला है। उसे उपन्यासकार प्रकाशित करते है। भूमंडलीकरण आदिवासियों के समक्ष ऐसा खतरनाक राक्षस के रूप में आ गया है जो उनका जीवन बरबाद ही कर देता है। आदिवासियों के समक्ष ऐसा आ गया हो वैसे “एक तरफ इन खानों में मजूरी दी तो दूसरी तरफ बरबादी के सरंजाम भी खड़े किए। पिछले पच्चीस तीस सालों में खान मालिकों ने जो बड़े-बड़े गढ्ढे छोडे है बरसात में इन गढ्ढों में पानी भर जाता है। और मच्छर पलते है। सेलेबल मलेरिया यहाँ के लिए महामारी है। महामारी मुंडी कटवा से साल दो साल पर भेंट होती है, किंतु इस जान मारू से तो हर रोज भेंट होगीं।”

रणेंद्र ने एक अच्छा काम किया कि भारतीय सिनेमा, दंत कथाओं में, कहानियों में या सूनी सुनाई जो कथाओं में क्रुर चित्र दिखाया जाता है, उसे उन्होंने खारिज किया, बल्कि रणेंद्र ने मानवीय सहानुभूति से उस प्रस्तुत किया। उन लोगों के साथ हो रहे शोषण को बखुबी चित्रित किया है। गाँव की युवतियों पर ठेकेदारों की बुरी नजर रहती है। आदिवासी असूर जाति के नवयुवा गाते है, लड़की और बांस बेचने गई असूरीन तुमने खदान के मेथ के मेथ के साथ नजरे क्यों मिलाई? तुमने खदान में मुंशी के साथ लगान क्यों बढ़ाया? पैसे की लालच में तुम कुल परिवार का नाम डूबो रही हो। आज भारत में सभी स्थानों पर जंगलों को दूर करके कांक्रीट के जंगल खड़े किए जाते है। रेल बिछा रहे है तो कहीं ब्रीज बन रहे है। जहाँ सदियों से निवास कर रहे आदिवासियों के निवासस्थान हटाकर वहाँ खदान बन रही है। इसी प्रश्न को प्रस्तुत किया।

शिक्षा के क्षेत्र हो या अन्य आदिवासी विकास के नाम पर स्थापित संस्थाओं में न तो उसे प्रवेश मिलता है और ना ही शिक्षा, जमीन को छीन बरसों से रहे मालिकों को जमीन हीन कर दिया।

चिंता सही है पैसे वाले जमीनदार से लेकर साहूकार सब भोली भाली आदिवासी कन्याओं का शारीरिक और मानसिक शोषण करते रहते है। भारत में औद्योगिक विकास के नाम पर आदिवासियों की मूल संस्कृति का हनन हो रहा है। कभी पुरुषों का कभी स्त्रियों का किसी न किसी रूप में शोषण हो रहा है। या पूरे समाज का लेकिन कोई न कोई बहाने से उसे कमजोर साबित करने की कोशिश की गई है। लेखक कहते है, "विकास के नामपर आदिवासियों का विनाश करनेवाले पूंजीपतियों को एकजूट होकर चुनौती ललकारना चाहिए तो वे भी घबराने लगेगे। जमी हत्या की जाँच और तीस चालिस खदानों में काम रूकवाकर उन्होंने सीधे नए देवता को चुनौती दे दी थी।"

प्रस्तुत शोध को मैंने पाँच अध्यायों में विभाजित किया है जो निम्नांकित है -

पहला अध्याय : आदिवासी विमर्श स्वरूप एवं परिभाषा

सामान्य रूप से जनजाति को 'वनजाति', 'गिरिजन' या 'वनों में रहने वाली जातियाँ' कहा गया है। भारतीय समाज में इनको अनुसूचित जनजातियों में रखा गया है। और इस प्रकार से पिछड़े जातियों को विशेष अधिकार दिये गये है, जिससे उनकी उन्नति हो। वास्तव में आदिवासी आर्यों से पूर्व का मनुष्य है। वनराई के बच्चे ही इस भूमि के आदि शैतान है। गोंड, भील, करेली आदि आदिवासी जनजातियाँ है। हिन्दी साहित्य में खासकर आदिवासी साहित्य को लेकर अनेकों ने अनेक प्रकार से आदिवासी जनजातियाँ, उनके अनेक प्रकार के जीवन-विधान, रीति-रिवाजों, उनकी जीवन शैलियों के बारे में स्थान दिया है।

दूसरा अध्याय : कथाकार रणेंद्र : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

इस अध्याय में मैंने रणेंद्र जी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व के उपर प्रकाश डाला है। रणेंद्र मूलतः झारखंड के आदिवासियों के जीवन से परिचित है। इसीकारण इनके कृतित्व पर आम तौर से आदिवासियों की जीवन व्यथा मुखरित हुई है।

तीसरा अध्याय : रणेन्द्र के कथा साहित्य का तात्त्विक विवेचन

इस अध्याय में मैंने उपन्यास और कहानियों का तात्विक विवेचन किया है। जिसमें कथावस्तू, पात्रों का चरित्र चित्रण देशकाल तथा वातावरण स्थिति उद्देश भाषा शैली को रेखांकित किया है।

चौथा अध्याय : रणेन्द्र के कथासाहित्य में आदिवासी विमर्श

इस अध्याय में मैंने आदिवासियों का जीवन संघर्ष जिसमें सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक, आदिवासी नारी आदियों पर विस्तार के साथ प्रकाश डाला है।

पाँचवा अध्याय : रणेन्द्र के कथा साहित्य का शिल्प

इस अध्याय में मैंने उपन्यास में व्यक्त शिल्प पर प्रकाश डाला है। जिसमें भाषा, बोलीभाषा, गालियाँ, लोकोक्तियाँ, लोकगीत आदि पर प्रकाश डाला है।

उपसंहार

आदिवासी विमर्श की यह विशेषतः है कि वह सवाल एक गूंगी निरीहता के रूप में दम नहीं तोडता बल्कि चेतना की लौ बनकर संगठित संघर्ष का रूप लेने की कोशिश करता है। पूरे पाट की तीस चालीस खदानों में काम रूकवाकर प्रशासन को अपनी बातें मनवाने के लिए राजी करना अपनी दशा में बदलाव लाने की सकारात्मक पहल है। ग्लोबल गाँव ये दुनिया बन गई है। यानि पूँजीपतियों का वर्चस्व जिस प्रकार से उत्तरआधुनिकता के आते ही यह घोषणा की गई कि अब राज्य और राष्ट्र खत्म हो जाएगे। लेकिन ऐसा नहीं हुआ, उपन्यास में लेखक ने मानवीय हिंसा की बड़ी दयनीय चित्र को लाया है। समाज की दारूण स्थिति को चित्रित किया है। भूमंडलीकरण ने इस समाज को भूखमरी और गरीबी का तोहफा दे दिया है। जो समाज झेल रहा है, कहते है, "लेकिन रूमझूम ने बताया है कि यह शिकायत नहीं थी, बल्कि विलाप था। अंदर से इतना खोंखला कर दिया है कि सामाजिक व्यवस्था भरभर गई है।" उपन्यास में 'ग्लोबल गाँव के देवता' पहला देवता विदेशी देवांग कंपनी है। विदेशी पर नाम रखा है देशी, दूसरा देवता है टाटा। इन दोनों देवताओं ने आदिवासियों की जमीन छीन ली और रोटी रोटी भी छीन ली। बीसवीं सदी की हार हमारी असूर जाति की अपने पूरे इतिहास में सबसे बड़ी हार थी। रणेंद्र का सारा आक्रोश विकास योजनाओं के खिलाफ है। जब रणेंद्र के पास समाज की जानकारियों का विपुल भंडार है, वे सौ पृष्ठों में फैले उपन्यास के संक्षिप्त कलेवर में विलुप्त जनजातियों का वृत्तांत ढूंसकर भर देना चाहते है ऐसा प्रतीत होता है।

आज आदिवासी समाज चौतरफा चुनौतियों से घिरा है। आदिवासी अस्मिता और अस्तित्व के लिए इतना गहरा संकट इससे पहले नहीं पैदा हुआ। जब सवाल अस्तित्व का हो तो प्रतिरोध भी स्वाभाविक है। आदिवासी लेखन में आत्मकथात्मक लेखन केंद्रीय स्थान नहीं बना सका क्योंकि स्वयं आदिवासी समाज आत्म से अधिक समूह में विश्वास करता है। अधिकतर आदिवासी समुदाय में काफी बाद तक भी निजी और निजता की धारणाएं घर नहीं कर पायी। परंपरा, संस्कृति, इतिहास को लेकर शोषण और उसका प्रतिरोध सबकुछ सामुहिक है। समूह की बात आत्मकथा में नहीं, जनकविता में ज्यादा अच्छे से व्यक्त हो सकती है।

निष्कर्ष

- रणेंद्र के कथासाहित्य में आदिवासियों की व्यथा, दु:ख का चित्रण हुआ है।
- 'ग्लोबल गाँव' के देवता उपन्यास के द्वारा विकास के नाम पर आदिवासियों का विस्थापन हो रहा है।
- रणेन्द्र के अनुसार व्यवस्था भारत के मूल आदिवासियों के जल, जमीन और जंगल से बेदखल कर रही है।
- लेखक के अनुसार आदिवासियों की मूल संस्कृति एवं लोकसंस्कृति से लुप्त हो रहे है।
- उनकी भाषा, उत्सव, त्यौहार समाप्त हो रहे है।

- व्यवस्था उनके मनुष्यत्व को नकार रही है।
- भूमण्डलीकरण, यांत्रिकीकरण, उद्योग आदि के द्वारा उनका शोषण हो रहा है।
- आदिवासियों को विभिन्न प्रकार के लालच दिखाकर धर्मपरिवर्तन किया जा रहा है।
- आदिवासियों को इस शोषण का एहसास हो रहा है, वे शिक्षित हो रहे है, संगठित हो रहे है।
- आदिवासी विरोध, विद्रोह, आंदोलन हो रहे है।
- आदिवासी अपनी मूल संस्कृति, भाषा, उत्सव तथा त्यौहार बनाए रखना चाहते है।
- आदिवासी हमेशा से प्रकृति संवर्धन चाहते है।
- उनकी भाषाएँ बोली के रूप में है। अब तक इनका लिखित स्वरूप नहीं आया है। वह बोली भाषा का भी संवर्धन करना चाहते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1) ग्लोबल गाँव के देवता, रणेंद्र, भारतीय ज्ञानपीठ, 2009

2) गायब होता देश, रणेंद्र, पेइ्इन बुक्स, 2014

3) रात बाकी और अन्य कहानियाँ, रणेंद्र, भारतीय ज्ञानपीठ, 2015

4) आदिवासी कौन?, रमणिका गुप्ता, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2008

5) आदिवासी लोक, भाग-1, रमणिका गुप्ता, शिल्पायन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2006

6) आदिवासी समाज और शिक्षा, रामशरण जोशी, अनु. अरुण प्रकाश, ग्रंथशिल्पी, नई दिल्ली, प्रथम हिन्दी संस्करण, 1996

7) आदिवासी विकास : एक सैद्धांति विवेचन, डॉ.ब्रह्मदेव शर्मा, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, सस्करण, 1986

8) आदिवासी स्वर और नयी शताबदी, संपा.रमणिका गुप्ता, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2002

9) आधुनिक हिन्दी उपन्यास और वर्ग-संघर्ष, केशवदेव शर्मा, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1991

10) आधुनिकता और हिन्दी उपन्यास, इन्द्रनाथ मदान, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण,1981

शोधकर्ता **शोधनिर्देशक**

यादव आनंद लखन **डॉ.संजय नामदेव गडपायले**